PHILOSOPHY

Class – XII

Dr. S. K. Singh
Mob. – 9431449951

C. लोकसंग्रह :–

→ योगी (स्थितप्रज्ञ) द्वारा लोक-कल्याण / सामाजिक कल्याण हेतु सम्पादित कर्म 'लोक-संग्रह' कहलाता है। व्यावहारिक नैतिकता के रूप या लोक-संग्रह को परमपुरुषार्थ माना गया है। यह भगवद्गीता का सर्वोच्च सामाजिक आदर्श है। यही मुक्ति का द्वार है।

→ श्रीकृष्ण गीता में योग की सिद्धि आत्मज्ञान हेतु कई मार्ग बतलाये हैं जिनमें से एक कर्मयोग है अर्थात् कुशलतापूर्वक कर्म का सम्पादन एवं कर्म-फल में आसक्ति का त्याग से परमसिद्धि प्राप्त होती है।

→ 'लोक-संग्रह' एक बहुआयामी सिद्धान्त है किन्तु गीता में इसकी विवेचना मुख्यतः कर्मयोग के संदर्भ में ही की गई है। लोकसंग्रह कर्मयोग से इसलिये संबंधित है कि कर्मयोग सिर्फ जानने में नहीं, करने में भरोसा करता है; कर्म का त्याग नहीं बल्कि कर्म-फल का त्याग, निवृति नहीं प्रवृति में विश्वास करता है और लोकसंग्रह इन्हीं मान्यताओं पर टिका है।

→ 'लोकसंग्रह' दो शब्दों के योग से बना है – लोक और संग्रह। यहाँ 'लोक' का आशय समस्त भूलोक से है तथा 'संग्रह' का विपरीतार्थक विखंडित करना या अस्थिर करना होता है; अतः 'लोकसंग्रह' का तात्पर्य है – प्रकृति का संतुलन या लोक-व्यवस्था की यथास्थिति बनाये रखना है।

→ लोकव्यवस्था (समाज-व्यवस्था) को बनाये रखने की जिम्मेदारी महापुरुषों (समाज के अग्रगण्य) के ऊपर होती है। यदि वे अपने कर्त्तव्य से पलायन करेंगे तो समाज के बहुसंख्यक इनका अनुकरण कर जीवन से पलायन कर जायेंगे और समाज अव्यवस्थित हो जायेगा।

→ लोकसंग्रह के संदर्भ में समाज के श्रेष्ठ जनों की महती भूमिका बताते हुये श्रीकृष्ण कहते हैं कि श्रेष्ठ व्यक्ति जो कुछ करता है, समाज के लिये वह आदर्श होता है और सामान्य जन उसे प्रामाणिक मानकर उसका अनुसरण करते हैं। इसलिये कर्म में आसक्त होकर

Scanned with CamScanner

अज्ञानीजन जिस तीव्रता और उत्साह से सकाम कर्म करते हैं उसी तीव्रता और तल्लीनता के साथ अनासक्त भाव से लोककल्याण हेतु महापुरुषों को कर्म करना चाहिये।

→ योगी (महापुरुष) का कर्म अनासक्त होता है अर्थात् वे न तो आसक्त होकर और न विरक्त रहकर कर्म करते हैं, वे कर्म का सम्पादन साक्षीभाव से करते हैं क्योंकि वे जानते हैं कि संपूर्ण कर्म प्रकृति के गुणों द्वारा किये जाते हैं; व्यक्ति तो उस कर्म का निमित्तमात्र कर्ता है।

→ लोकसंग्रह वस्तुतः कर्त्तव्य (कर्म) के प्रति श्रद्धा है। इस संदर्भ में लोक-शिक्षा को प्रभावी विधि बतलाते हुये श्रीकृष्ण कहते हैं कि अज्ञानियों की बुद्धि में भ्रम अर्थात् कर्मों में अश्रद्धा उत्पन्न नहीं करना चाहिये बल्कि अपने आचरण से अर्थात् कर्म के प्रति श्रद्धा को व्यावहारिक आयाम देते हुये अज्ञानियों को स्वधर्म पालन के लिये प्रेरित करना चाहिये अर्थात् अपने आचरण से ही प्रेरित करना चाहिये।

→ लोकसंग्रहार्थ जो कर्म किये जाते हैं वह सतोगुणी चेतना द्वारा सम्पन्न होता है। सतोगुणी चेतना से योगी अपने कर्म का सम्पादन करते हैं; ~~जिसे यज्ञ कहा जाता है~~ लोकसंग्रह हेतु कर्मयोगी अनेक कर्म करता हुआ भी अकर्ता बना रहता है फलतः उसके कर्म अकर्म होते हैं जो बन्धनकारी नहीं होता, कल्याणकारी होता है।

→ आत्मवान पुरुष (सिद्धपुरुष अथवा स्थितप्रज्ञ) के लिये इस संसार में कोई कर्त्तव्य शेष नहीं रहता। सांसारिक कर्म को करने या न करने से उसका कोई प्रयोजन नहीं है, उसका संपूर्ण भूतों से कुछ भी स्वार्थ का संबंध नहीं है तो भी वह स्वधर्म पालन करता है और उसका स्वधर्म केवल लोकहितार्थ ही होता है। वे वस्तुतः संपूर्ण सृष्टि में परमात्मा का साक्षात्कार कर उसके हित/कल्याण में ही रत रहता है। अर्थात् सिद्धपुरुषों के कर्म स्वाभाविक रूप से लोकसंग्रह है।

Scanned with CamScanner